ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI TITLED No. :UPBIL04292,
RNI REG. No.: UPBIL/2014/66218, SOCI.REG. No.: 561/2013-14 Vol.-5, No.-II, PP-270-272,YEAR- DEC.2016

शिक्षा ग्रन्थों और प्रातिशाख्यों में वर्ण संज्ञा का तुलनात्मक अध्ययन

❑ डॉ0 विनीता सिंह

वेदार्थ की रक्षा के लिए ध्वनि वि ाारदों ने गौलिक ध्वनि या वर्ण समूह का स्वरूप भलीभांति स्पश्ट किया है। वर्ण ही भाशा की इकाई है। वर्णों के सन्धान से ही भाब्द तथा वाक्य निश्पन्न होते हैं। अतः भाशतत्ववि ाारदों ने सर्वप्रथम वर्ण समाम्नाय या वर्ण संग्रह प्रस्तुत किया है। ि ाक्षा ग्रन्थों में 'वर्ण समाम्नाय' भाब्द का अधिक प्रयोग किया गया है। वर्ण समाम्नाय का अर्थ है– वर्णों के समुदाय का अभ्यास अथवा पाठ करना। इन वर्णों को संख्यानुसार प्रस्तुत करने के साथ ही विभिन्न संज्ञाओं में भी निबद्ध किया गया है।

ि ाक्षा ग्रन्थों में वर्णसंज्ञा– भाशागत प्रवाह को व्याकरण स्रोत में निबद्ध करने वाले प्रतिनिधि ग्रन्थ स्वरूप प्राति ाख्याँ, व्याकरण ग्रन्थों तथा ि ाक्षा ग्रन्थों में एक भाब्द के माध्यम से अधिक से अधिक भाब्दों को ग्रहण करने अथवा सूत्र परम्परा का निर्वहन करने हेतु 'संज्ञाओं' का निर्धारण किया गया है। इन संज्ञाओं को परिभाशित करते हुए विभिन्न ि ाक्षाओं में मतों का साम्य व वैशम्य भी है। पाणिनीय ि ाक्षा में अनेक संज्ञाओं का प्रयोग किया गया है किन्तु उन्हें परिभाशित नहीं किया गया है। वर्ण विशयक कतिपय संज्ञाओं का उल्लेख प्रस्तुत किया जा रहा है। ि ाक्षा ग्रन्थों में उपलब्ध वर्ण संज्ञाओं पर सामान्य दृश्टिपात अपेक्षित है।

अक्षर संज्ञा– ि ाक्षा ग्रन्थों में वर्ण तथा अक्षर समान अर्थ में प्रयुक्त किए गए हैं।

स्वर संज्ञा– हेमचन्द्र भाब्दानु ाासन के अनुसार 'औदन्ताः स्वराः' कहकर 'अ' से लेकर 'औ' पर्यन्त वर्णों को स्वर कहा गया है (1)। पारि ि ाक्षा ने 'स्वर' को परिभाशित करते हुए पतंजलि का समर्थन किया है– 'यः स्वयं राजते तन्तु स्वरमाहपतंजलिः'।

समानाक्षर संज्ञा– हेमचन्द्र भाब्दानु ाासन में 'अ' से लेकर 'ऌ' पर्यन्त वर्ण समानाक्षर कहे गए हैं (2)। तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में अ, इ, उ के तीन–तीन भेदों को लेकर नौ समानाक्षर कहे गए हैं– 'अथ नवादितः समानाक्षराणि' (3)। ऋक् प्रातिशाख्य में 'अ' से 'ऋ' पर्यन्त वर्णों को ह्रस्व–दीर्घ भेद से ग्रहण करके आठ समानाक्षर स्वीकार किए गए हैं– 'अश्टौ समानाक्षराण्यादितः' (4)।

सन्ध्यक्षर संज्ञा– ए, ऐ, ओ, औ को सन्ध यक्षर कहा गया है। 'तत चत्वारः सन्ध्यक्षराणि' (5)। 'एदैदोदौ तु चत्वारों ह्रस्वाः सन्ध्यक्षराणि च' (6)। 'ए, ऐ, ओ, औ सन्ध्यक्षरम्' (7)।

ह्रस्व–दीर्घ–प्लुत संज्ञा– एक मात्रिक स्वर ह्रस्व संज्ञक, द्विमात्रिक स्वर दीर्घ संज्ञक तथा त्रिमात्रिक स्वर प्लुतसंज्ञक कहलाते हैं–
'ऊकालोऽ ह्रस्वदीर्घप्लुतः' (8)।

गुरु संज्ञा– संयोग युक्त ह्रस्व स्वर तथा दीर्घ स्वरों की 'गुरु' संज्ञा होती है। "संयोगे गुरुदीर्घ च" (9)।

लघु संज्ञा– ह्रस्व स्वर 'लघु' संज्ञक है। 'ह्रस्वं लघुः' (10)।

व्यंजन संज्ञा– स्वरों के अतिरिक्त सभी वर्णों की व्यंजन संज्ञा है। 'कादिर्व्यजनम्' (11)। ' ोशो व्यंजनानि' (12)। पारि ि ाक्षा में इन्हें 'स्वर' की सहायता से व्यक्त होने के कारण व्यंजन कहा है– 'उपरिस्थानिना तेन व्यंजनं व्यंजनमुच्यते' (13)।

स्प ि संज्ञा– ककार से लेकर मकार तक पच्चीस व्यंजन स्प ि संज्ञक कहे गए हैं– 'कादयो मान्तिका स्प ाः' (14)। 'कादिमान्ताः स्मृताः स्प ाः' (15)। 'तत्र ककारादयो मकारान्ताः स्प ाः पंचविं ातिः' (16)।

वर्ग संज्ञा– स्प ि संज्ञक व्यंजनों के पांच–पांच वर्णों का समूह एक वर्ग बनाता है। 'स्प ानां

❑ एसो०प्रो०– संस्कृत, कन्या महाविद्यालय आर्य समाज भूड़, बरेली (उ0प्र0) भारत

पंचपंचस्युर्वर्गाः' (17)। 'स्प ार्शानामानुपूर्व्येण पंचपंच वर्गाः' (18)। इन्हें क्रमानुसार कु, चु, टु, तु, पु समझना चाहिए– 'कुचुटुतुपु वर्गास्तदुत्पंचं वर्णसंग्रहः' (19)।

अन्तस्थ संज्ञा– य् र् ल् व् व्यंजनों को अन्तस्थ संज्ञा दी गई हैं– 'चतस्रो यादयोऽन्तस्थाः' (20)। 'यवौ रलौ चतस्रोऽन्तस्थाः' (21)। 'अन्तस्थाः यादिवोत्तराः' (22)।

ऊश्म संज्ञा– भा ा् स् ह् चार व्यंजनों की ऊश्म संज्ञा कही गई है– 'ऊश्माण ाादय चैव चत्वार इति कीर्त्तिताः' (23)।

'ऊश्माणः भाशसाः सहाः' (24)।

तैत्तिरीय प्राति ाख्य में छह वर्णों को ऊश्म संज्ञक कहा गया है किन्तु उनका निर्दे ा नहीं किया गया है। आपिशलि िक्षा में जिह्वामूलीय तथा उपध्मानीय के साथ भा ा् स् ह् को ऊश्म संज्ञक वर्ण माना गया है (25)। पाणिनि ने विसर्ग को भी ऊश्म कहा है (26)।

संयोग संज्ञा– स्वर रहित दो या दो से अधि ाक अव्यवहित व्यंजनों की संयोग संज्ञा कही जाती है। 'संयोग व्यंजनं यत्रोपर्युपरिसंयुक्तं तत्संयोगसंज्ञं भवति' (27)। 'हलोऽनन्तराः संयोग' (28)।

अयोगवाह संज्ञा– अनुस्वार, विसर्ग जिह्वामूलीय, उपध्मानीय, नासिक्य और यम की अयोगवाह संज्ञा होती है। पाणिनीय ि िक्षा में कहा गया है– 'अयोगवाहा विज्ञेया आश्रयस्थानभागिनः' (29)।

अनुस्वार संज्ञा– 'अं' की अनुस्वार संज्ञा है। 'अं इति अनुस्वारः' (30)।

विसर्ग संज्ञा– 'अः' की विसर्ग संज्ञा है। 'अः' इति विसर्गः (31)

जिह्वामूलीय संज्ञा– क तथा ख से पूर्व अर्ध विसर्ग वर्ण जिह्वामूलीय है (32)।

उपध्मानीय संज्ञा– प तथा फ पूर्व अर्द्ध विसर्ग वर्ण उपध्मानीय है (33)।

यम संज्ञा– याज्ञवल्क्य ि िक्षा में कुं खुं गुं घुं को यम कहा है। 'चत्वारो यमाः कुं खुं गुं घुं इति (34)। वर्णरत्नप्रदीपिका ि िक्षा में यम की संख्या चार कही गई है परन्तु उनका निर्दे ा नहीं किया गया है (35)।

सोश्म संज्ञा– प्रत्येक वर्ग के द्वितीय तथा चतुर्थ वर्णों की सोश्म संज्ञा है। 'युग्मौ सोश्माणी' (36)। इनमें अपने से पूर्व वर्ण की आवृत्ति हकार के साथ सुनी जाती है। इसी प्रकार अच्, हल्, भार् आदि प्रत्याहार भी अपने मध्यवर्ती वर्णों की संज्ञा होते हैं।

प्राति ाख्यों में वर्णसंज्ञा विचार– ऋक् प्रातिशाख्य में ह्रस्व व दीर्घ स्वरों को 'अक्षर' कहा है– 'उभये त्वक्षराणिः'।

प्रातिशाख्य में अक्षर (37), स्वर (38), समानाक्षर (39), सन्ध्यक्षर (40), ह्रस्व (41), दीर्घ (42), प्लुत (43), गुरु (44), लघु (45), व्यंजन (46), स्प ि (47), वर्ग (48), अन्तस्थ (49), ऊश्म (50), अयोगवाह (51), अनुस्वार (52), विसर्ग (53), जिह्वमूलीय (54), उपध्मानीय (55), यम (56), सोश्म (57), संयोग (58) आदि संज्ञाएं प्राप्त होती हैं। ऋक् तंत्र में प्लुत के लक्षण से युक्त वर्ण को 'वृद्ध' कहा गया है (59)।

अश्टध्यायी में ि िक्षा ग्रन्थों व प्राति ाख्यों में प्राप्त संज्ञा भाब्दों का प्रयोग है उपर्युक्त संज्ञाएं अश्टाधायी में ि िक्षादि में स्वीकृत परिभाशा के अनुरूप ही है। ि िक्षा ग्रन्थों तथा प्राति ाख्यों मे विभिन्न संज्ञाओं के विचारों में मत साम्य हैं। प्राति ाख्यों में संज्ञाओं का विस्तार अपेक्षाकृत अधिक है। इन ग्रन्थों ने भाषा की मूलभूत इकाई ध्वनि अर्थात् वर्णों का समाम्नायन किया और उनका वैज्ञानिक विश्लेषण निरूपित करने की दिशा में महान प्रयास करते हुए वेदार्थ की रक्षा व अधिगम के मार्ग को सहज बनाया। भाषा विज्ञान एवं ध्वनि विज्ञान इन ग्रन्थों का ऋणी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. हेमचन्द्र शब्दानुशासन (1.1.4).
2. हे० श० (1.1.6).
3. तैत्तिरीय प्रातिशाख्य (1.2).
4. ऋक् प्रातिशाख्य (1.1).
5. ऋ० प्रा० (1.2).
6. षोडशश्लोकी शिक्षा (3).
7. हे० श० (1.1.8).
8. अष्टाध्यायी (1.2.26).
9. अष्टा० (1.4.11,12).
10. अष्टा० (1.4.10).
11. हे० श० (1.1.10).

12. तै० प्रा० (1.6).
13. पारि शिक्षा (12).
14. षो० श्लो० शिक्षा (8).
15. व्या० शिक्षा (1.7).
16. गौतमी शिक्षा (1).
17. व्या० शिक्षा (1.9).
18. तै० प्रा० (1.10).
19. षो० श्लो० शिक्षा (5).
20. शैशिरीय शिक्षां
21. पारि शिक्षां
22. व्या० शिक्षा (1.7).
23. शैशि० शिक्षां
24. वर्ण रत्न प्रदीपिका शिक्षा (13).
25. आपिशलि शिक्षा (9).
26. पारि शिक्षा (14).
27. गौ० शिक्षा (1).
28. अष्टा० (1.1.7).
29. पाणिनीय शिक्षा (22).
30. वाजसनेयि प्राति० (21).
31. वा० प्राति० (22).
32. षो० श्लो० (39).
33. षो० श्लो० (39).
34. याज्ञवल्क्य शिक्षा (2.97,98).
35. व० र० प्र० शिक्षा (14).
36. ऋ० प्रा० (1.3).
37. तै० प्रा० (20.2),(24.7)। वा० प्राति० (1.99)। चतुरध्यायिका (1.93).
38. ऋ० प्राति० (1.3)। तै० प्राति० (1.5)। वा० प्राति० (8.2–6)। ऋक् तन्त्र (1.2).
39. ऋ० प्राति० (1.1)। तै० प्राति० (1.2)। वा० प्राति० (1.44)। चतु० अ० (3.42).
40. ऋ० प्राति० (1.2)। वा० प्राति० (1.45)। चतु० अ० (1.40)। ऋक् तन्त्र (1.2).
41. ऋ० प्राति० (1.17)। तै० प्राति० (1.31)। वा० प्राति० (1.55)। ऋक् तन्त्र (40)। चतु० अ० (1.59).
42. ऋ० प्राति० (1.18)। तै० प्राति० (1.35) वा० प्राति० (1.57)। ऋक् तन्त्र (43)। चतु० अ० (1.60).
43. ऋ० प्राति० (1.30)। तै० प्राति० (1.36)। वा० प्राति० (1.58)। चतु० अ० (1.62)
44. ऋ० प्राति० (18.42)। तै० प्राति० (22.24)। चतु० अ० (1.52)
45. ऋ० प्राति० (18.44)। तै० प्राति० (22.14)। चतु० अ० (1.51)
46. ऋ० प्राति० (1.16)। तै० प्राति० (1.6)। वा० प्राति० (1.47)। ऋक् तन्त्र (1.2)
47. ऋ० प्राति० (1.7)। तै० प्राति० (1.7)। वा० प्राति० (8.8–13)। ऋक् तन्त्र (1.2)
48. ऋ० प्राति० (1.8)। तै० प्राति० (1.10)
49. ऋ० प्राति० (1.9)। तै० प्राति० (1.8)। वा० प्राति० (8.14–15)। ऋक् तन्त्र (1.2)
50. ऋ० प्राति० (1.10)। तै० प्राति० (1.9)। वा० प्राति० (8.16–17)।
51. वा० प्राति० (8.19–24)। ऋक् तन्त्र (1.2)
52. ऋ० प्राति० (1.15)। वा० प्राति० (8.21)
53. वा० प्राति० (8.22)
54. ऋ० प्राति० (1.41)
55. वा० प्राति० (8.20)
56. ऋ० प्राति० (6.29)। तै० प्राति० (21.12–13)। वा० प्राति० (8.24)। ऋक् तन्त्र (1.2)। चतु० अ० (1.99)
57. ऋ० प्राति० (1.13)। वा० प्राति० (1.54)। ऋक् तन्त्र (16)। चतु० अ० (1.10)
58. ऋ० प्राति० (1.37)। वा० प्राति० (1.48)। ऋक् तन्त्र (27)। चतु० अ० (1.98)
59. ऋक् तन्त्र (44)